समिओ । अधवा एक्कारसकम्माणमुदयस्सेव खओवसमसण्णा । कुदो? चारित्तघायणसत्तीए अभावस्सेव तव्ववएसादो । तेण उप्पण्ण इदि खओवसमिओ पमादाणुविद्धसंजमो ।

कम्मइयजोगीसु मिच्छादिट्ठी सासणसम्मादिट्ठी असंजदसम्मादिट्ठी सजेगिकेवली ओघं ॥४०॥

कुदो? मिच्छादिट्ठीणमोदइएण, सासणाणं पारिणामिएण, कम्मइयकायजोगिअसंजदसम्मादिट्ठीणं ओवसमिय-खइय-खओवसमियभावेहि, सजोगिकेवलीणं खइएण भावेण ओघप्पिदगुणट्ठाणेहि[1] साधम्मुवलंभा ।

एवं जोगमग्गणा समत्ता ।

वेदाणुवादेण इत्थिवेद - पुरिसवेद-णउंसयदवेदएसु मिच्छादिट्ठि प्पहुडि जाव अणियट्टि त्ति ओघं[2] ॥४१॥

सुगममेदं, एदस्सट्ठपरूवणाए विणा वि अत्थोवलद्धीहो ।

....

संयम क्षायोपशमिक कहलाता है । अथवा, चारित्रमोहसम्बन्धी उक्त ग्यारह कर्मप्रकृतियोंके उदयकी ही क्षयोपशमसंज्ञा है, क्योंकि, चारित्रके घातनेकी शक्तिके अभावकी ही क्षयोपशमसंज्ञा है । इस प्रकारके क्षयोपशमसे उत्पन्न होनेवाला प्रमादयुक्त संयम क्षायोपशमिक है ।

कार्मणकाययोगियोंमें मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि और सयोगिकेवली ये भाव ओघके समान हैं ॥४०॥

क्योंकि, कार्मणकाययोगी मिथ्यादृष्टियोंके औदयिकभावसे, सासादनसम्यग्दृष्टियोंके पारिणामिकभावसे, असंयतसम्यग्दृष्टियोंके औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक भावोंकी अपेक्षा, तथा सयोगिकेवलियोंके क्षायिक भावकी अपेक्षा ओघमें विवक्षित गुणस्थानोंके भावोंके साथ समानता पाई जाती है ।

इस प्रकार योगमार्गणा समाप्त हुई ।

वेदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी और नपुंसकवेदियोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥४१॥

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, इसके अर्थकी प्ररूपणाके विना भी अर्थका ज्ञान हो जाता है ।

....

१ मु. प्रतौ. ओघम्मि गदगुणट्ठाणेहि इति पाठः ।

२ वेदानुवादेन स्त्रीपुन्नपुंसकवेदानां x x सामान्यवत् । स. सि. १,८.

अवगदवेदएसु अणियट्टिप्पहुडि जाव अजोगिकेवली ओघं[1] ॥४२॥

एत्थ चोदगो भणदि–जोणि–मेहणादीहि समण्णिदं सरीरं वेदो, ण तस्स विणासो अत्थि, संजदाणं मरणप्पसंगा। ण भाववेदविणासो वि अत्थि, सरीरे अविणट्ठे तब्भावस्स विणासविरोहा। तदो णावगदवेदत्तं जुज्जदे इदि? एत्थ परिहारो उच्चदे–ण सरीरमित्थि–पुरिसवेदो, णामकम्मजणिदस्स सरीरस्स मोहणीयत्तविरोहा। ण मोहणीयजणिदमवि सरीरं, जीवविवाइणो मोहणीयस्स पोग्गलविवाइत्तविरोहा। ण सरीरभावो वि वेदो, तस्स तदो पुधभूदस्स उवलंभा[2]। परिसेसादो मोहणीयदव्वकम्मक्खंधो तज्जणिदजीवपरिणामो वा वेदो। तत्थ तज्जणिदजीवपरिणामस्स वा परिणामेण सह कम्मक्खंधस्स वा अभावेण अवगदवेदो होदि त्ति तेण[3] णेस दोसो त्ति सिद्धं। सेसं सुगमं।

एवं वेदमग्गणा समत्ता।

....

अपगतवेदियोंमें अनिवृत्तिकरणसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥४२॥

शंका - यहांपर शंकाकार कहता है कि योनि और लिंग आदिसे संयुक्त शरीर वेद कहलाता है। सो अपगतवेदियोंके इस प्रकारके वेदका विनाश नहीं होता है, क्योंकि, यदि योनि, लिंग आदिसे समन्वित शरीरका विनाश माना जाय, तो अपगतवेदी संयतोंके मरणका प्रसंग प्राप्त होगा। इसी प्रकार अपगतवेदी जीवोंके भाववेदका विनाश भी नहीं है, क्योंकि, जब तक शरीरका विनाश नहीं होता, तब तक शरीरके धर्मका विनाश माननेमें विरोध आता है। इसलिए अपगतवेदता युक्तिसंगत नहीं है ?

समाधान - अब यहां उपर्युक्त शंकाका परिहार कहते हैं-न तो शरीर, स्त्री या पुरुषवेद है, क्योंकि, नामकर्मसे उत्पन्न होनेवाले शरीरके मोहनीयपनेका विरोध है। और न शरीर मोहनीयकर्मसे ही उत्पन्न होता है, क्योंकि, जीवविपाकी मोहनीयकर्मके पुद्गलविपाकी होनेका विरोध है। न शरीरका धर्म ही वेद है, क्योंकि, शरीरसे पृथग्भूत वेद पाया जाता है। पारिशेष न्यायसे मोहनीयके द्रव्यकर्मस्कंधको, अथवा मोहनीयकर्मसे उत्पन्न होनेवाले जीवके परिणामको वेद कहते हैं। उनमें वेदजनित जीवके परिणामका, अथवा परिणामके साथ मोहकर्मस्कंधका अभाव होनेसे जीव अपगतवेदी होता है। इसलिए अपगतवेदता माननेमें उपर्युक्त कोई दोष नहीं आता है,-यह सिद्ध हुआ।

शेष सूत्रार्थ सुगम है।

इस प्रकार वेदमार्गणा समाप्त हुई।

....

१ x x x अवेदानां च सामान्यवत्। स.सि. १,८. २ मु. प्रतौ-अणुवलंभा इति पाठः।

३ ता. २ प्रतौ होदि तेण इति पाठः।

कसायाणुवादेण कोधकसाइ-माणकसाइ-मायकसाइ-लोभकसाईसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव सुहुमसांपराइयउवसमा खवा ओघं[1] ॥४३॥

सुगममेदं ।

अकसाईसु चदुट्ठाणी ओघं[2] ॥४४।

चोदओ भणदि-कसाओ णाम जीवगुणो, ण तस्स विणासो अत्थि, णाण-दंसणाणमिव । विणासे वा जीवस्स वि विणासेण[3] होदव्वं, णाण-दंसणविणासेणेव । तदो ण अकसायत्तं[4] घडदे इदि? होदु णाण-दंसणाणं विणासम्हि जीवविणासो, तेसिं तल्लक्खणत्तादो । ण कसाओ जीवस्स लक्खणं, कम्मजणिदस्स तल्लक्खणत्तविरोहा । ण कसायाणं कम्मजणिदत्तमसिद्धं, कसायवड्ढीए जीवलक्खणणाणहाणिअण्णहाणुववत्तीदो तस्स कम्मजणिदत्तसिद्धीदो । ण च गुणो गुणंतरविरोही[5] अण्णत्थ तहाणुवलंभा । सेसं सुगमं ।

एवं कसायमग्गणा समत्ता ।

कषायमार्गणाके अनुवादसे क्रोधकषायी, मानकषायी, मायाकषायी और लोभकषायी जीवोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर सूक्ष्मसाम्पराय उपशामक और क्षपक गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥४३॥

यह सूत्र गुगम है ।

अकषायी जीवोंमें उपशान्तकषाय आदि चारों गुणस्थानवर्ती भाव ओघके समाह हैं ॥४४॥

शंका - यहां शंकाकार कहता है कि कषाय नाम जीवगुणका है । इसलिए उसका विनाश नहीं होता । जैसे ज्ञान और दर्शन गुणोंका विनाश नहीं होता उसी प्रकार उसका विनाश नहीं होता । यदि जीवगुणोंका नाश माना जाय तो ज्ञान और दर्शनके विनाशके समान जीवका भी विनाश हो जाना चाहिए । इसलिए सूत्रमें कही गई अकषायता घटित नहीं होती है ?

समाधान - ज्ञान और दर्शनके विनाश होनेपर जीवका विनाश भले ही हो जावे, क्योंकि, वे जीवके लक्षण हैं । किन्तु कषाय तो जीवका लक्षण नहीं है, क्योंकि, कर्मजनित कषायको जीवका लक्षण माननेमें विरोध आता है । और न कषायोंका कर्मसे उत्पन्न होना असिद्ध है, क्योंकि, कषायोंकी वृद्धि होनेपर जीवके लक्षणभूत ज्ञानकी हानि अन्यथा बन नहीं सकती है । इसलिए कषायका कर्मसे उत्पन्न होना सिद्ध है । तथा गुण गुणान्तरका विरोधी नहीं होता, क्योंकि, अन्यत्र वैसा देखा नहीं जाता ।

शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

इस प्रकार कषायमार्गणा समाप्त हुई ।

[1] कषायानुवादेन क्रोधमानमायालोभकषायाणां x x सामान्यवत् । स.सि. १,८.

[2] x x x अकषायाणां च सामान्यवत् । स.सि. १,८ [3] ता. १ मु. प्रत्योः जीवस्स विणासेण इति पाठः ।

[4] प्रतिषु 'तदो णुकसायत्तं' इति पाठः । [5] मु. प्रतौ-विरोहे इति पाठः ।

णाणाणुवादेण मदिअण्णाणि-सुदअण्णाणि-विभंगणाणीसु मिच्छादिट्ठी सासणसम्मादिट्ठी ओघं[1] ॥४५॥

कधं मिच्छादिट्ठिणाणस्स अण्णाणत्तं? णाणकज्जाकरणादो किं णाणकज्जं? णादत्थसद्दहणं । ण तं मिच्छादिट्ठिम्हि अत्थि । तदो णाणमेव अण्णाणं, अण्णहा जीवविणासप्पसंगा । अवगयदवधम्मणाइसु मिच्छादिट्ठिम्हि सद्दहणमुवलंभए चे? ण, अत्तागमपयत्थसद्दहणविरहियस्स दवधम्मणाइसु जहट्ठसद्दहणविरोहा । ण च एस ववहारो लोगे अप्पसिद्धो, पुत्तकज्जमकुणंते पुत्ते वि लोगे अपुत्तववहारदंसणादो । तिसु अण्णाणेसु णिरुध्देसु सम्मामिच्छादिट्ठिभावो किण्ण परूविदो? ण, तस्स सद्दहणासद्दहणेहि

ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी और विभंगज्ञानी जीवोंमें मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि भाव ओघके समान हैं ॥४५॥

शंका - मिथ्यादृष्टि जीवोंके ज्ञानको अज्ञानपना कैसे होता?

समाधान - क्योंकि, उनका ज्ञान ज्ञानका कार्य नहीं करता है ।

शंका - ज्ञानका कार्य क्या है?

समाधान - जाने हुए पदार्थका श्रद्धान करना ज्ञानका कार्य है ।

किन्तु वह ज्ञानकार्य मिथ्यादृष्टि जीवमें पाया नहीं जाता । इसलिए उनका ज्ञान ही अज्ञान है । (यहांपर अज्ञानका अर्थ ज्ञानका अभाव नहीं लेना चाहिए) अन्यथा (ज्ञानरूप जीवके लक्षणका विनाश होनेसे लक्ष्यरुप) जीवके विनाशका प्रसंग प्राप्त होगा ।

शंका - दयाधर्मको जाननेवाले ज्ञाताओंमें हुए मिथ्यादृष्टि जीवमें तो श्रद्धान पाया जाता है (फिर उसके ज्ञानको अज्ञान क्यों माना जाय)?

समाधान - नहीं, क्योंकि,दयाधर्मके ज्ञाताओंमें भी आप्त, आगम और पदार्थके श्रद्धानसे रहित जीवके यथार्थ श्रद्धानके होनेका विरोध है । (अतएव उनका ज्ञान अज्ञान ही है) । ज्ञानका कार्य नहीं करने पर ज्ञानमें अज्ञानका व्यवहार लोकमें अप्रसिद्ध भी नहीं है, क्योंकि, पुत्रकार्यको नहीं करनेवाले पुत्रमें भी लोकके भीतर अपुत्र कहनेका व्यवहार देखा जाता है ।

शंका - तीनों अज्ञानोंको निरुद्ध अर्थात् आश्रय कर उनकी भावप्ररूपणा करते हुए सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानका भाव क्यों नहीं बतलाया?

समाधान - नहीं, क्योंकि, श्रद्धान, और अश्रद्धान, इन दोनोंसे एक साथ अनुविद्ध

[1] ज्ञानानुवादेन मत्यज्ञानिश्रुताज्ञानिविभंगज्ञानिनां x x सामान्यवत् । स.सि. १,८.

दोहिं मि अक्कमेण अणुविद्धस्स संजदासंजदो व्व पत्तजच्चंतरस्स णाणेसु अण्णाणेसु वा अत्थित्तविरोहा । सेसं सुगमं ।

आभिणिबोहिय-सुद[1]-ओधिणाणीसु असंजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाव खीणकसायवीदरागछदुमत्था ओघं[2] ॥४६॥

सुगममेदं, ओघादो भावं पडि भेदाभावा ।

मणपज्जवणाणीसु पमत्तसंजदप्पहुडि जाव खीणकसायवीदरागछदुमत्था ओघं ॥४७॥

एंद पि सुगमं ।

केवलणाणीसु सजोगिकेवली अजोगिकेवली ओघं[3] ॥४८॥

कुदो? खइयभावं पडि भेदाभावा । सजोगो त्ति को भावो? अणादिपारिणामिओ भावो । णोवसमिओ, मोहणीए अणुवसंते वि जोगुवलंभा । ण खइओ, अणप्पसरूवस्स कम्माणं खएणुप्पत्तिविरोहा । ण घादिकम्मोदयजणिओ, णट्ठे वि घादिकम्मोदए केव-

होनेके कारण संयतासंयतके समान भिन्नजातीयताको प्राप्त सम्यग्मिथ्यात्वका पांचों ज्ञानोंमें, अथवा तीनों अज्ञानोंमें अस्तित्व होनेका विरोध है ।

शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर क्षीणकषायवीतरगछद्मस्थ गुणस्थान तक भाव ओघके सामान हैं ॥४६॥

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, ज्ञानमार्गणामें ओघसे भावकी अपेक्षा कोई भेद नहीं है ।

मनःपर्ययज्ञानियोंमें प्रमत्तसंयतसे लेकर क्षीणकषायवीतरागछद्मस्थ गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥४७॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

केवलज्ञानियोंमें सयोगिकेवली और अयोगिकेवली भाव ओघके समान है ॥४८॥

क्योंकि, क्षायिकभावके प्रति कोई भेद नहीं है ।

शंका - 'सयोग' यह कौनसा भाव है?

समाधान - 'सयोग' यह अनादि पारिणामिक भाव है । इसका कारण यह है कि यह योग न तो औपशमिक भाव है, क्योंकि, मोहनीयकर्मके उपशम नहीं होने पर भी योग पाया जाता है । न वह क्षायिक भाव है, क्योंकि, आत्मस्वरूपसे रहित योगकी कर्मोंके क्षयसे उत्पत्ति माननेमें विरोध आता है । योग घातिकर्मोदय-जनित भी नहीं है,

१ ता.२ प्रतौ अभिणि-सुद इति पाठः । २ XXX मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानिनां च सामान्यवत् । स.सि. १,८ ३ मु. प्रतौ सजोगिकेवली ओघं इति पाठः ।

लिम्हि जोगुवलंभा। णो अघादिकम्मोदयजणिदो वि, संते वि अघादिकम्मोदए अजोगिम्हि जोगाणुवलंभा। ण सरीरणामकम्मोदयजणिदो वि, पोग्गलविवाइयाणं जीवपरिफद्दणहेउत्तविरोहा। कम्मइयसरीरं ण पोग्गलविवाई, तदो पोग्गलाणं वण्ण-रस-गंध-फास-संठाणा-गमणादीणमणुवलंभा[1]। तदुप्पाइदो जोगो होदु चे ण, कम्मइयसरीरं पि पोग्गलविवाई चेव, सव्वकम्माणमासयत्तादो। कम्मइओदयविणट्ठसमए चेव जोगविणासदंसणादो कम्मोइयसरीरजणिदो जोगो चे? ण, अघाइकम्मोदयविणासाणंतरं विणस्संतभवियत्तस्स पारिणामियस्स ओदइयत्तप्पसंगा। तदो सिद्धं जोगस्स पारिणामियत्तं। अधवा ओदइओ जोगो, सरीरणामकम्मोदयविणासाणंतरं जोगविणासुवलंभा। ण च भवियत्तेण विउवचारो[2] कम्मसंबंधविरोहिणो तस्स कम्मजणिदत्तविरोहा। सेसं सुगमं।

एवं णाणमग्गणा समत्ता।

क्योंकि, घातिकर्मोदयके नष्ट होने पर भी सयोगिकेवलीमें योगका सद्भाव पाया जाता है। न योग अघातिकर्मोदय-जनित भी है, क्योंकि, अघातिकर्मोदयके रहने पर भी अयोगिकेवलीमें योग नहीं पाया जाता। योग शरीरनामकर्मोदय-जनित भी नहीं है, क्योंकि, पुद्गलविपाकी प्रकृतियोंके जीव-परिस्पंदनका कारण होनेमें विरोध है।

शंका - कार्मणशरीर पुद्गलविपाकी नहीं है, क्योंकि, उससे पुद्गलोंके वर्ण, रस, गन्ध, स्पर्श और संस्थान आदिका आगमन आदि नहीं पाया जाता है। इसलिए योगको कार्मणशरीरसे उत्पन्न होनेवाला मान लेना चाहिए ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, सर्व कर्मोंका आश्रय होनेसे कार्मणशरीर भी पुद्गलविपाकी ही है। इसका कारण यह है कि वह सर्व कर्मोंका आश्रय या आधार है।

शंका - कार्मणशरीरके उदय विनष्ट होनेके समयमें ही योगका विनाश देखा जाता है। इसलिए योग कार्मणशरीर-जनित है, ऐसा मानना चाहिए ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, यदि ऐसा माना जाय तो अघातिकर्मोदयके विनाश होनेके अनन्तर ही विनष्ट होनेवाले पारिणामिक भव्यत्वभावके भी औदयिकपनेका प्रसंग प्राप्त होगा।

इसप्रकार पूर्वोक्त विवेचनसे योगके पारिणामिकपना सिद्ध हुआ। अथवा, 'योग' यह औदयिकभाव है, क्योंकि, शरीरनामकर्मके उदयका विनाश होनेके पश्चात् ही योगका विनाश पाया जाता है। और, ऐसा माननेपर भव्यत्वभावके साथ व्यभिचार भी नहीं आता है, क्योंकि, कर्मसम्बन्धके विरोधी भव्यत्व पारिणामिकभावकी कर्मसे उत्पत्ति माननेमें विरोध आता है। शेष सूत्रार्थ सुगम है।

इस प्रकार ज्ञानमार्गणा समाप्त हुई।

[1] निरुपभोगमन्त्यम्। त.सू. २,४४। अन्ते भवमन्त्यम्। किं तत्? कार्मणम्। इन्द्रियप्रणालिकया शब्दादीनामुपलब्धिरुपभोगः। तदभावान्निरुपभोगम्। स.सि. २,४४ [2] ता. १ प्रतौ, ण उवचारो ता. २ प्रतौ ण विउचारो इति पाठः।

संजमाणुवादेण संजदेसु पमत्तसंजदप्पहुडि जाव अजोगिकेवली ओघं[१] ॥ ४९ ॥

सुगममेदं ।

सामाइयछेदोवट्ठावणसुध्दिसंजदेसु पमत्तसंजदप्पहुडि जाव अणियट्टि त्ति ओघं ॥ ५० ॥

एदं पि सुगमं ।

परिहारसुध्दिसंजदेसु पमत्त-अप्पमत्तसंजदा ओघं ॥ ५१ ॥

कुदो ? खओवसमियं भावं पडि विसेसाभावा । पमत्तापमत्तसंजदेसु अण्णे वि भावा संति, एत्थ ते किण्ण परूविदा ? ण, तेसिं पमत्तापमत्तसंजमत्ताभावा । पमत्तापमत्तसंजदाणं[२] भावेसु पुच्छिदेसु ण हि सम्मत्तादिभावाणं परूवणा णाओववण्णेत्ति ।

सुहुमसांपराइयसुध्दिसंजदेसु सुहुमसांपराइया उवसमा खवा ओघं ॥ ५२ ॥

संयममार्गणाके अनुवादसे संयतोंमें प्रमत्तसंयतसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥ ४९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयतोंमें प्रमत्तसंयतसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थान तक भाव ओघ के समान हैं ।

यह सूत्र भी सुगम है ।

परिहारशुध्दिसंयतोंमें प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत ये भाव ओघके समान हैं ॥५१ ॥

क्योंकि, क्षायोपशमिक भावके प्रति दोनोंमें कोई विशेषता नहीं है ।

शंका - प्रमत्त और अप्रमत्त संयत जीवोंमें अन्य भाव भी होते हैं, यहांपर वे क्यों नहीं कहे ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, उनमें प्रमत्त और अप्रमत्त संयमपनेका अभाव है । दूसरी बात यह है कि प्रमत्त और अप्रमत्तसंयतोंके भावोंके पूछनेपर सम्यक्त्व आदि भावोंकी प्ररूपणा करना न्याय-संगत नहीं है ।

सूक्ष्मसाम्परायिकशुध्दिसंयतोंमें सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामक और क्षपक भाव ओघके समान हैं ॥ ५२ ॥

---

१ संयमानुवादेन सर्वेषां संयतानां x x x सामान्यवत् स. सि. १, ८.

२ ता. १-२ प्रत्योः पमत्तसंजमाणं इति पाठ : ।

उवसामगाणमुवसमिओ भावो, खवगाणं खइओ भावो त्ति उत्तं होदि ।

जहाक्खादविहारसुध्दिसंजदेसु चदुट्ठाणी ओघं ॥ ५३ ॥

सुगममेदं ।

संजदासंजदा ओघं[1] ॥ ५४ ॥

एदं पि सुगमं ।

असंजदेसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव असंजदसम्मादिट्ठि त्ति ओघं[2] ॥ ५५ ॥

सुगममेदं , पुव्वं परूविदत्तादो ।

एवं संजममग्गणा समत्ता ।

दंसणाणुवादेण चक्खुदंसणि-अचक्खुदंसणीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव खीणकसायवीदरागछदुमत्था त्ति ओघं[3] ॥ ५६ ॥

....

उपशामकोंके औपशमिक भाव और क्षपकोंके क्षायिक भाव होता है, यह अर्थ सूत्रद्वारा कहा गया है ।

यथाख्यातविहारशुध्दिसंयतोंमें उपशान्तकषाय आदि चारों गुणस्थानवर्ती भाव ओघके समान हैं ॥ ५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

संयतासंयत भाव ओघके समान है ॥ ५४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

असंयतोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥ ५५ ॥

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, पहले प्ररूपण किया जा चुका है ।

इस प्रकार संयममार्गणा समाप्त हुई ।

दर्शनमार्गणाके अनुवादसे चक्षुदर्शनी और अचक्षुदर्शनियोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकषायवीतरागछद्मस्थ गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥ ५६ ॥

....

१ x x x संयतासंयतानां x x सामान्यवत् । स. सि. १, ८.

२ x x x असंयतानां च सामान्यवत् । स. सि. १, ८.

३ दर्शनानुवादेन चक्षुर्दर्शनाचक्षुर्दर्शनावधिदर्शनकेवलदर्शनिनां सामान्यवत् । स. सि. १,८.

कुदो? मिच्छादिट्ठिप्पहुडि खीणकसायपज्जंतसव्वगुणट्ठाणाणं चक्खु-अचक्खुदंसणविरहियाणमणुवलंभा ।

ओहिदंसणी ओहिणाणिभंगो ॥५७॥

केवलदंसणी केवलणाणिभंगो ॥५८॥

एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एवं दंसणमग्गणा समत्ता ।

लेस्साणुवादेण किण्हलेस्सिय-णीललेस्सिय-काउलेस्सिएसु चदुट्ठाणी ओघं[1] ॥५९॥

चदुण्हं ठाणाणं समाहारो चदुट्ठाणी । केण समाहारो? एगलेस्साए । सेसं सुगमं ।

तेउलेस्सिय-पम्मलेस्सिएसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव अप्पमत्तसंजदा त्ति ओघं ॥६०॥

एदं पि सुगमं[2] ।

क्योंकि, मिथ्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकषाय पर्यंत कोई गुणस्थान चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शनवाले जीवोंसे रहित नहीं पाया जाता है ।

अवधिदर्शनी जीवोंके भाव अवधिज्ञानियोंके भावोंके समान हैं ॥५७॥

केवलदर्शनी जीवोंके भाव केवलज्ञानियोंके भावोंके समान हैं ॥५८॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

इस प्रकार दर्शनमार्गणा समाप्त हुई ।

लेश्यामार्गणाके अनुवादसे कृष्णलेश्या, नीललेश्या और कापोतलेश्यावालोंमें आदिके चार गुणस्थानवर्ती भाव ओघके समान हैं ॥५९॥

चार स्थानोंके समाहारको चतुःस्थानी कहते हैं ।

शंका - चारों गुणस्थानोंका समाहार किस अपेक्षासे है ?

समाधान - एक लेश्याकी अपेक्षासे है, अर्थात् आदिके चारों गुणस्थानोंमें एकसी लेश्या पाई जाती है ।

शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

तेजोलेश्या और पद्मलेश्या वालोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥६०॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

---

[1] लेश्यानुवादेन षड्लेश्यानामलेश्यानां च सामान्यवत् । स.सि. १,८.

[2] ता. १ प्रतौ एदं सुगमं इति पाठ : ।

सुक्कलेस्सिएसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति ओघं ॥६१॥

सुगममेदं ।

एवं लेस्सामग्गणा समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिएसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति ओघं[1] ॥६२॥

कुदो? एत्थतणगुणट्ठाणाणं ओघगुणट्ठाणेहिंतो भवियत्तं पडि भेदाभावा ।

अभवसिद्धिय त्ति को भावो, पारिणामिओ भावो[2] ॥६३॥

कुदो? कम्माणमुदएण उवसमेण खएण खओवसमेण वा अभवियत्ताणुप्पत्तीदो । भवियत्तस्स वि पारिणामिओ चेय भावो, कम्माणमुदय-उवसम-खय-खओवसमेहि भवियत्ताणुप्पत्तीदो । गुणट्ठाणस्स भावमभणिय मग्गणट्ठाणभावं परूवेंतस्स कोभिप्पाओ?

....

शुक्ललेश्यावालोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥६१॥

यह सुत्र सुगम है ?

इस प्रकार लेश्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धिकोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥६२॥

क्योंकि, भव्यमार्गणासम्बन्धी गुणस्थानोंका ओघ गुणस्थानोंसे भव्यत्व नामक पारिणामिकभावके प्रति कोई भेद नहीं है ।

अभव्यसिद्धिक यह कौनसा भाव है? पारिणामिक भाव है ॥६३॥

क्योंकि, कर्मोंके उदयसे, उपशमसे, क्षयसे, अथवा क्षयोपशमसे अभव्यत्व भाव उत्पन्न नहीं होता है । इसी प्रकार भव्यत्व भी पारिणामिक भाव ही है, क्योंकि, कर्मोंके उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपशमसे भव्यत्व भाव उत्पन्न नहीं होता ।

शंका - यहांपर गुणस्थानके भावको न कह कर मार्गणास्थानसम्बन्धी भावका प्ररूपण करते हुए आचार्यका क्या अभिप्राय है?

....

१ भव्यानुवादेन भव्यानां मिथ्यादृष्ट्याद्ययोगकेवल्यन्तानां सामान्यवत् । स.सि. १,८.

२ अभव्यानां पारिणामिको भावः । स.सि. १,८.

गुणट्ठाणभावो अउत्तो वि जाणिज्जदि[1] **। अभवियत्तं पुण उवदेसमवेक्खदे, पुव्वमपरूविदसरूवत्तादो । तेण मग्गणाभावो उत्तो त्ति ।**

एवं भवियमग्गणा समत्ता ।

सम्मत्ताणुवादेण सम्मादिट्ठिसु असंजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति ओघं ॥६४॥

सुगममेदं

खइयसम्मादिट्ठीसु असंजदसम्मादिट्ठि त्ति को भावो, खइओ भावो[2] **॥६५॥**

कुदो? दंसणमोहणीयस्स णिम्मूलक्खएणुप्पण्णसम्मत्तादो ।

खइयं सम्मत्तं[3] **॥६६॥**

खइयसम्मादिट्ठीसु सम्मत्तं खइयं चेव होदि त्ति अणुत्तसिद्धीदो णेदं सुत्त - माढवेदव्वं? ण एस दोसो । कुदो? ण ताव खइयसम्मादिट्ठी सण्णा खइयस्स सम्मत्तस्स

....

समाधान - गुणस्थानसम्बन्धी भाव तो विना कहे भी जाना जाता है । किन्तु अभव्यत्व (कौनसा भाव है यह) उपदेशकी अपेक्षा रखता है, क्योंकि, उसके स्वरूपका पहले प्ररूपण नहीं किया गया है, इसलिए यहांपर (गुणस्थानका भाव न कह कर) मार्गणासम्बन्धी भाव कहा है ।

इस प्रकार भव्यमार्गणा समाप्त हुई ।

सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादसे सम्यग्दृष्टियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥६४॥

यह सूत्र सुगम है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि यह कौनसा भाव है? क्षायिक भाव है ॥६५॥

उक्त जीवोंके क्षायिक सम्यक्त्व होता है ॥६६॥

क्योंकि, दर्शनमोहनीयकर्मके निर्मूल क्षयसे क्षायिकसम्यक्त्व उत्पन्न होता है ।

शंका - क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें सम्यग्दर्शन क्षायिक ही होता है, यह बात अनुक्तसिद्ध है, इसलिए इस सूत्रका आरम्भ नहीं करना चाहिए?

समाधान - यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि यह संज्ञा क्षायिक-

....

[1] ता. १ प्रतौ णाण्णिज्जदि मु. प्रतौ णाणिज्जओ इति पाठः । [2] सम्यक्त्वानुवादेन क्षायिकसम्यग्दृष्टिषु असंयतसम्यग्दृष्टिः क्षायिको भावः । स.सि. १,८, [3] क्षायिकं सम्यक्त्वम् । स.सि. १,८.

अत्थित्तं गमयदि, तवण-भक्खरादिणामस्स अणणुअट्ठस्स[1] वि उवलंभा । ण च अण्णं किंचि खइयसम्मत्तस्स अत्थित्तम्हि चिण्हमत्थि । तदो खइयसम्मादिट्ठिस्स खइयं चेव सम्मत्तं होदि त्ति जाणाविदं । अवरं च ण सव्वे सिस्सा उप्पण्णा चेव, किंतु अउप्पण्णा वि अत्थि । तेहि खइयसम्मादिट्ठीणं किमुवसमसम्मत्तं किं खइयसम्मत्तं, किं वेदगसम्मत्तं होदि त्ति पुच्छिदे एदस्स सुत्तस्स अवयारो जादो, खइयसम्मादिट्ठीणं खइयं चेव सम्मत्तं होदि, ण सेसदोसम्मत्ताणि त्ति जाणावणट्ठं अपुव्वकरणक्खवयाणं खइयभावाणं खइयचरित्तस्सेव दंसणमोहखवयाणं पि खइयभावाणं तस्संबंधेण वेदयसम्मत्तोदए संते वि खइयसम्मत्तस्स अत्थित्तप्पसंगे तप्पडिसेहट्ठं वा ।

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो[2] ॥६७॥

सुगममेदं ।

संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदा त्ति को भावो, खओवसमिओ भावो[3] ॥६८॥

....

सम्यक्त्वके अस्तित्वका ज्ञान नहीं कराती है । इसा कारण यह है कि लोकमें तपन, भास्कर अदि अनन्वर्थ (अर्थशून्य या रूढ) नाम भी पाये जाते हैं । इसके अतिरिक्त अन्य कोई चिह्न क्षायिकसम्यक्त्वके अस्तित्वका है नहीं । इसलिए क्षायिकसम्यग्दृष्टिके क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है, यह बात इस सूत्रसे ज्ञापित की गई है । दूसरी बात यह भी है कि सभी शिष्य व्युत्पन्न नहीं होते, किन्तु कुछ अव्युत्पन्न भी होते हैं । उनके द्वारा क्षायिक-सम्यग्दृष्टियोंके क्या उपशमसम्यक्त्व है, किंवा क्षायिकसम्यक्त्व है, किंवा वेदकसम्यक्त्व होता है, ऐसा पूछने पर क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके क्षायिक ही सम्यक्त्व होता है, शेष दो सम्यक्त्व नहीं होते हैं, इस बातके जतलानेके लिए, अथवा क्षायिकभाववाले अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती क्षपकोंके क्षायिक चारित्रके समान क्षायिकभाववाले भी जीवोंके दर्शनमोहनीयका क्षपण करते हुए उसके सम्बन्धसे वेदकसम्यक्त्वप्रकृतिके उदय रहने पर भी क्षायिकसम्यक्त्वके, अस्तित्वका प्रसंग प्राप्त होनेपर उसका प्रतिषेध करने के लिए सूत्रका अवतार हुआ है ।

किन्तु क्षायिकसम्यग्दृष्टिका असंयतत्व औदयिक भावसे है ॥६७॥

यह सूत्र सुगम है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत यह कौनसा भाव है? क्षायोपशमिक भाव है ॥६८॥

....

[1] ता. १ प्रतौ अणाणुअट्ठस्स इति पाठः । [2] असंयतत्वमौदयिकेन भावेन । स.सि. १,८.

[3] संयतासंयतप्रमत्ताप्रमत्तसंयतानां क्षायोपशमिको भावः । स.सि. १,८.

कुदो? चारित्तावरणकम्मोदए संते वि जीवसहावचारित्तेगदेसस्स संजमासंजमपमत्त-अप्पमत्तसंजमस्स आविब्भावस्सुवलंभा ।

खइयं सम्मत्तं[1] ॥६९॥

सुगममेदं ।

चदुण्हमुवसमा त्ति को भावो, ओवसमिओ भावो[2] ॥७०॥

मोहणीयस्सुवसमेणुप्पण्णचरित्तत्तादो, मोहोवसमणहेदुचारित्तसमण्णिदत्तादो य ।

खइयं सम्मत्तं[3] ॥७१॥

पारद्धदंसणमोहणीयक्खवणो कदकरणिज्जो वा उवसमसेढिं ण चढदि त्ति जाणावणट्ठमेदं सुत्तं भणिदं । सेसं सुगमं ।

चदुण्हं खवा सजोगिकेवली अजोगिकेवलि त्ति को भावो, खइओ भावो[4] ॥७२॥

....

क्योंकि, चारित्रावरणकर्मके उदय होने पर भी जीवके स्वभावभूत चारित्रके एक देशरूप संयमासंयम, प्रमत्तसंयम और अप्रमत्तसंयमका (उक्त जीवोंके क्रमशः) आविर्भाव पाया जाता है ।

उक्त जीवोंके सम्यग्दर्शन क्षायिक ही होता है ॥६९॥

यह सूत्र सुगम है ।

अपूर्वकरण आदि चार गुणस्थानोंके क्षायिकसम्यग्दृष्टि उपशामक यह कौनसा भाव है? औपशमिक भाव है ॥७०॥

क्योंकि, उपशान्तकषायके मोहनीयकर्मके उपशमसे उत्पन्न हुआ चारित्र पाया जानेसे और शेष तीन उपशामकोंके मोहोपशमके कारणभूत चारित्रसे समन्वित होनेसे औपशमिकभाव पाया जाता है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि चारों उपशामकोंके सम्यग्दर्शन क्षायिक ही होता है ॥७१॥

दर्शनमोहनीयकर्मके क्षपणका प्रारम्भ करनेवाला जीव, अथवा कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव, उपशमश्रेणीपर नहीं चढता है, इस बातका ज्ञान करानेके लिए यह सूत्र कहा गया है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि चारों गुणस्थानोंके क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली यह कौनसा भाव है? क्षायिक भाव है ॥७२॥

....

[1] क्षायिकं सम्यक्त्वम् । स.सि. १,८. [2] चतुर्णामुपशमकानामौपशमिको भावः । स.सि. १,८.

[3] क्षायिकं सम्यक्त्वम् । स.सि. १.८ ता. २ प्रतौ खइयसम्मत्तं इति पाठः

[4] शेषाणां सामान्यवत् । स.सि. १,८.

कुदो? मोहणीयस्स खवणहेदुअपुव्वसण्णिद चारित्तसमण्णिदत्तादो मोहक्खएणुप्पण्णचारित्तादो घादिक्खएणुप्पण्णणव केवललद्धीहिंतो।

खइयं सम्मत्तं ॥७३॥

सुगममेदं ।

वेदयसम्मादिट्ठीसु असंजदसम्मादिट्ठि त्ति को भावो? खओवसमिओ भावो[1] ॥७४॥

सुगममेदं ।

खओवसमियं सम्मत्तं[2] ॥७५॥

ओघम्मि असंजदसम्मादिट्ठिस्स तिण्णि भावा सामण्णेण परूविदा, एदं सम्मत्तमोवसमियं खइयं खओवसमियं वेत्ति ण परूविदं । संपहि सम्मत्तमग्गणाए एदं सम्मत्तमोवसमियं खइयं खओवसमियं वेत्ति एदेहि सुत्तेहि जाणाविदं । सेसं सुगमं ।

....

क्योंकि, अपूर्वकरण आदि तीन क्षपकोंका मोहनीयकर्मके क्षपणके कारणभूत अपूर्वसंज्ञावाले चारित्रसे समन्वित होनेके कारण, क्षीणकषायवीतरागछद्मस्थके मोहक्षयसे उत्पन्न हुआ चारित्र होनेके कारण, तथा सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीके घातिया कर्मोंका क्षय ही जानेसे उत्पन्न नव केवललब्धियोंकी अपेक्षा क्षायिक भाव पाया जाता है ।

चारों क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीके सम्यग्दर्शन क्षायिक ही होता है ॥७३॥

यह सुत्र सुगम है ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि यह कौनसा भाव है? क्षायोपशमिक भाव है ॥७४॥

यह सुत्र सुगम है ।

वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके सम्यग्दर्शन क्षायोपशमिक होता है ॥७५॥

ओघप्ररूपणामें असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके सामान्यसे तीन भाव कहे हैं; किन्तु उनका यह सम्यग्दर्शन औपशमिक है, या क्षायिक है, किंवा क्षायोपशमिक है, यह प्ररूपण नहीं किया है । अब सम्यक्त्वमार्गणामें असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका यह सम्यग्दर्शन औपशमिक सम्यक्त्वियोंके औपशमिक होता है, क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके क्षायिक होता है और वेदकसम्यग्दृष्टियोंके क्षायोपशमिक होता है, यह बात इन सूत्रोंसे सूचित की गई है ।शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

....

१ क्षायोपशमिकसम्यग्दृष्टिषु असंयतसम्यग्दृष्टेः क्षायोपशमिको भावः । स.सि. १,८.

२ क्षायोपशमिकं सम्यक्त्वम् । स.सि. १,८.

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो[1] ॥७६॥

अवगयत्थमेदं ।

संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदा[2] त्ति को भावो? खओवसमिओ भावो[3] ॥७७॥

णादट्ठमेयं ।

खओवसमियं सम्मत्तं[4] ॥७८॥

कुदो? दंसणमोहोदए संते वि जीवगुणीभूदसद्दहणस्स उप्पत्तीए उवलंभा ।

उवसमसम्मादिट्ठीसु असंजदसम्मादिट्ठि त्ति को भावो । उवसमिओ भावो[5] ॥७९॥

कुदो? दसंणमोहुवसमेणुप्पण्णसम्मत्तादो ।

उवसमियं सम्मत्तं[6] ॥८०॥

....

किन्तु वेदकसम्यग्दृष्टिका असंयतत्व औदयिक भावसे है ॥७६॥

इस सूत्रका अर्थ जाना हुआ है ।

वेदकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत यह कौनसा भाव है? क्षायोपशमिकभाव है ॥७७॥

इस सूत्रका अर्थ ज्ञात है ।

उक्त जीवोंके सम्यग्दर्शन क्षायोपशमिक होता है ॥७८॥

क्योंकि, दर्शनमोहनीयके (अंगभूत सम्यक्त्वप्रकृतिके) उदय रहने पर भी जीवके गुणस्वरूप श्रद्धानकी उत्पत्ति पाई जाती है ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि यह कौनसा भाव है? औपशमिक भाव है ॥७९॥

क्योंकि, उपशमसम्यग्दृष्टियोंका सम्यक्त्व दर्शमोहनीयकर्मके उपशमसे उत्पन्न हुआ है ।

उक्त जीवोंके सम्यग्दर्शन औपशमिक होता है ॥८०॥

....

[1] असंयतः पुनरौदयिकेन भावेन । स.सि. १,८. [2] ता. २ प्रतौ पमत्तपमत्त अप्पापमत्तसंजदा इति पाठः । [3] संयतासंयतप्रमत्ताप्रमत्तसंयतानां क्षायोपशमिको भावः । स.सि. १,८. [4] क्षायोपशमिकं सम्यक्त्वम् । स.सि [5] औपशमिकसम्यग्दृष्टिषु असंयतसम्यग्दृष्टेरौपशमिको भावः । स.सि. १,८. [6] औपशमिकं सम्यक्त्वम् । स.सि. १,८. ता. १ मु. प्रत्योः उवसामियं सम्मत्तं इति पाठः ।

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो[१] ॥८१॥

दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदा त्ति को भावो, खओवसमिओ भावो[२] ॥८२॥

सुगममेदं ।

उवसमियं सम्मत्तं[३] ॥८३॥

एदं पि सुगमं ।

चदुण्हमुवसमा त्ति को भावो, उवसमिओ भावो[४] ॥८४॥

उवसमियं सम्मत्तं[५] ॥८५॥

दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

सासणसम्मादिट्ठी ओघं[६] ॥८६॥

....

किन्तु उपशमसम्यक्त्वी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवका असंयतत्व औदयिक भावसे है ॥८१॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

उपशमसम्यग्दृष्टि संयतासंयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत यह कौनसा भाव है? क्षायोपशमिक भाव है ॥८२॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंके सम्यग्दर्शन औपशमिक होता है ॥८३॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

अपूर्वकरण आदि चार गुणस्थानोंके उपशमसम्यग्दृष्टि उपशामक यह कौनसा भाव है? औपशमिक भाव है ॥८४॥

उक्त जीवोंके सम्यग्दर्शन औपशमिक होता है ॥८५॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

सासादनसम्यग्दृष्टि भाव ओघके समान है ॥८६॥

....

[१] असंयतः पुनरौदयिकेन भावेन । स.सि. १,८. [२] संयतासंयतप्रमत्ताप्रमत्तसंयतानां क्षायोपशमिको भावः । स.सि. १.८. [३] औपशमिकं सम्यक्त्वम् । स.सि. १,८. [४] चतुर्णामुपशमकानामौपशमिको भावः । स.सि. १,८. [५] औपशमिकं सम्यक्त्वम् । स.सि. १,८. [६] सासादनसम्यग्दृष्टेः पारिणामिको भावः । स.सि. १,८

सम्मामिच्छादिट्ठी ओघं[1] ॥८७॥

मिच्छादिट्ठी ओघं[2] ॥८८॥

तिण्णि वि सुत्ताणि अवगयत्थाणि ।

एवं सम्मत्तमग्गणा समत्ता ।

सण्णियाणुवादेण सण्णीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव खीणकसायवीदरागछदुमत्था त्ति ओघं[3] ॥८९॥

सुगममेदं ।

असण्णि त्ति को भावो, ओदइओ भावो[4] ॥९०॥

कुदो? णोइंदियावरणस्स सव्वघादिफद्दयाणमुदएण असण्णित्तुप्पत्तीदो । असण्णिगुणट्ठाणभावो किण्ण परूविदो? ण, उवदेसमंतरेण तदवगमादो[5] ।

एवं सण्णिमग्गणा समत्ता ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि भाव ओघके समान है ॥८७॥

मिथ्यादृष्टि भाव ओघके समान है ॥८८॥

इन तीनों ही सूत्रोंका अर्थ ज्ञात है ।

इस प्रकार सम्यक्त्वमार्गणा समाप्त हुई ।

संज्ञिमार्गणाके अनुवादसे संज्ञियोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकषायवीतरागछद्मस्थ तक भाव ओघके समान हैं ॥८९॥

यह सूत्र सुगम है ।

असंज्ञी यह कौनसा भाव है? औदयिक भाव है ॥९०॥

क्योंकि, नोइन्द्रियावरणकर्मके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयसे असंज्ञित्व भाव उत्पन्न होता है ।

शंका - यहांपर असंज्ञी जीवोंके गुणस्थानसम्बन्धी भावको क्यों नहीं बतलाया?

समाधान - नहीं, क्योंकि, उपदेशके विना ही उसका ज्ञान हो जाता है ।

इस प्रकार संज्ञीमार्गणा समाप्त हुई ।

[1] सम्यग्मिथ्यादृष्टेः क्षायोपशमिको भावः । स.सि. १,८. [2] मिथ्यादृष्टेरौदयिको भावः । स. सि. १,८. [3] संज्ञानुवादेन संज्ञिनां सामान्यवत् । स.सि. १,८. [4] असंज्ञिनामौदयिको भावः । स.सि. १,८. [5] तदुभयव्यपदेशरहितानां सामान्यवत् । स.सि. १,८.

आहाराणुवादेण आहारएसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति ओघं[1] ॥९१॥

सुगममेदं ।

अणाहाराणं कम्मइयभंगो[2] ॥९२॥

एदं पि सुगमं । कम्मइयादो विसेसपदुप्पायणट्ठं उत्तरसुत्तं भणदि-

णवरि विसेसो, अजोगिकेवलि त्ति को भावो, खइओ भावो ॥९३॥

सुगममेदं ।

(एवं आहारमग्गणा समत्ता)

एवं भावाणुगमो त्ति समत्तमणिओगद्दारं[3] ।

....

आहारमार्गणाके अनुवादसे आहारकोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगिकेवली तक भाव ओघके समान हैं ॥९१॥

यह सूत्र सुगम है ।

अनाहारक जीवोंके भाव कार्मणकाययोगियोंके समान हैं ॥९२॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

कार्मणकाययोगियोंमें विशेषता प्रतिपादन करनेके लिए उत्तर सूत्र कहते हैं -

किन्तु विशेषता यह है कि अनाहारक अयोगिकेवली यह कौनसा भाव है? क्षायिक भाव है ॥९३॥

यह सूत्र सुगम है ।

(इस प्रकार आहारमार्गणा समाप्त हुई ।)

इस प्रकार भावानुगमनामक अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

....

१ आहारानुवादेन आहारकाणां x x सामान्यवत् । स.सि. १,८.

२ x x अनाहारकाणां च सामान्यवत् । स.सि. १,८.

३ भावः परिसमाप्तः । स.सि. १,८.